Available online at http://www.nrjp.co.in

Journal of Management Science, Operations & Strategies, (E- ISSN 2456-9305)
Vol. 5, Issue, 01. 111-117p, September, 2021

National Research & Journal Publication

Review Article

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति एवं सामाजिक समस्याएँ: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

साधना कुमारी
स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग
ल0ना0मिथिला विश्वविद्यालय,दरभंगा

Abstract

विश्व में मानव अधिकारों के प्रति जागरूकता के विकास के साथ महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के प्रति चिंता बड़ी है। भारत में गुलामी की अवधि में सामाजिक स्थितियाँ क्रमशः बिगड़ती गयी और परतंत्रता की मानसिकता ने राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त की पंक्तियों को इस प्रकार चरितार्थ किया– ''हम कौन थे क्या हो गए और क्या होंगे अभी आओ विचारे आज मिलकर ये समस्याएं सभी'' आजादी के बाद 73 वर्षों की विकास यात्रा में देश में महिलाओं, उनकी शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक स्थिति और सामाजिक मान्यताओं के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन की सुगबुगाहट अवश्य लक्षित है। लेकिन इस विशाल और अनगिनत विविधता वाले देश में इस परिवर्तन का अंश नगण्य ही है। संविधान में महिलाओं को पुरूषों के समान ही अधिकार दिए है, अत्याचारों से दबी उनकी दयनीय जीवन स्थितियों को रूपांतरित करने और सामाजिक, आर्थिक तथा विधिक पहचान बनाने के लिए कई कल्याणकारी मान्यताएं दी है। लेकिन उनकी विकास की स्थिति और दशा आज भी चिंतनीय है।

***मूलशब्द** – महिला, अधिकार, समानता, परिस्थिति, सामाजिक, समस्या, परिवार भूमिका।*

Copyright©2021 साधना कुमारी *This is an open access article for the issue release and distributed under the NRJP Journals License, which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.*

प्रस्तावना

किसी भी सभ्य समाज की स्थिति उस समाज में स्त्रियों की दशा देखकर ज्ञात की जा सकती है। महिलाओं की स्थिति में समय–समय पर देश काल के अनुसार परिवर्तन होता रहा है। समय के साथ भारतीय समाज में अनेक परिवर्तन हुये जिससे महिलाओं की स्थिति में दिन–प्रतिदिन गिरावट आती गई तथा गरीब महिलाओं पर इसका अधिक प्रभाव पड़ा, क्योंकि सैकड़ों वर्षों की परतन्त्रता के कारण भारतवर्ष विश्व के सबसे गरीब देशों में से एक है। समाज के निर्माण में महिलाओं की भूमिका उतनी ही प्रमुख है जितनी कि शरीर को जीवित रखने के लिये जल, वायु और भोजन है। स्त्रियां ही संतति की परम्परा में मुख्य भूमिका निभाती है फिर भी प्राचीन समाज से लेकर आधुनिक कहे जाने वाले समाज तक स्त्रियां उपेक्षित ही रही है। उन्हें कम से कम सुविधाओं, अधिकारों और उन्नति के अवसरों में रखा जाता रहा है, इसी कारण महिलाओं की परिस्थिति अत्यन्त निचले स्तर पर है। भारतीय समाज की परम्परागत व्यवस्था में महिलायें आजीवन पिता, पति और पुत्र के संरक्षण में जीवन–यापन करती रही है। भारतीय संविधान में पुरूषों एवं महिलाओं को समान दर्जा और अधिकार दिये जाने के बावजूद इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि विकास और सामाजिक स्तर की दृष्टि से महिलायें अभी पुरुषों से काफी पीछे हैं। भारतीय समाज में महिला आज भी कमजोर वर्गों में शामिल है। महिला परिवार की आधारशिला है और सामाजिक विकास बहुत कुछ उसी के सद्प्रयासों से सम्भव है। जिस समाज की महिलायें उपेक्षा और तिरस्कार का

शिकार होती है वह समाज कभी प्रगति नहीं कर सकता।

महिलाओं के ऊपर सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षणिक, व्यवसायिक एवं अन्य अनेक ऐसी निर्योग्यतायें लाद दी गई है जिसके कारण उन्हें जीवन में आगे बढ़ने एवं व्यक्तित्व का समुचित विकास करने का अवसर नहीं मिलता। ये निर्योग्यतायें उनके लिए बहुत बड़ी चुनौतियां एवं समस्यायें बनकर उभरी है। इन निर्योग्यताओं के कारण कार्य में दक्षता, योग्यता एवं कुशलता होने के बावजूद ये महिलायें न तो सार्वजनिक क्षेत्र में अपना योगदान कर सकती थी और न शिक्षा प्राप्त कर सकती थी, न उच्च संस्थानों में नौकरी कर सकती थी और न किसी प्रकार का धार्मिक कार्य बिना पुरूष के सम्पादित कर सकती थी। पुरूष वर्ग के साथ खानपान पर प्रतिबन्ध था। महिलाओं के लिये उच्च शिक्षा के दरवाजे पूर्णतया बन्द थे जिससे उन्हें विवशतापूर्ण जिन्दगी घर की चहारदीवारी के अन्दर व्यतीत करनी पड़ती थी। इन्हें पढ़–लिखकर नौकरी करने के अधिकारों से वंचित रखा गया था। महिलाओं की बदतर स्थिति के लिये मूलरूप से ही लड़कों, लड़कियों को संस्कार रूप में मिलने वाली सोच जिम्मेदार है, उसके बाद पारिवारिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक परम्पराये, मूल्य तथा रीति–रिवाज इस दृष्टिकोण की ओर पुष्टि करते हैं। अतः इस सोच में बदलाव लाना महिला विकास की सबसे बड़ी चुनौती है। महिलाओं की शिक्षा पर बल देते हुये विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948) के ये ऐतिहासिक शब्द भी ध्यान देने योग्य है, जो निम्न हैं –

''शिक्षित स्त्री के बिना शिक्षित पुरूष हो ही नहीं सकता। यदि पुरुषों और स्त्रियों में से केवल किसी एक के लिये सामान्य शिक्षा का प्रावधान करना हो तो यह अवसर स्त्रियों को दिया जाना चाहिए क्योंकि यह शिक्षा स्वयंएमेव अगली पीढ़ी को प्राप्त हो जायेगी।''

सन् 1963 के वनस्थली विद्यापीठ में भाषण देते हुये पं. जवाहर लाल नेहरू ने भी इसी तथ्य को दोहराया था कि लड़के की शिक्षा केवल एक व्यक्ति की शिक्षा है परन्तु एक लड़की की शिक्षा सम्पूर्ण परिवार की शिक्षा है। उपरोक्त विवेचन से महिलाओं के लिये शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व स्पष्ट होता है लेकिन स्त्री शिक्षा इतनी आवश्यक होते हुये भी उपेक्षित है इसलिये महिलाओं के सामने यह एक जटिल समस्या एवं चुनौती के रूप में उभरकर सामने आयी है। शैक्षिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक आदि सभी दृष्टियों से महिलायें अभी भी पिछड़ी हुई है। कानूनी और संवैधानिक दृष्टि से अनेक अधिकार प्राप्त होने और योजनागत विकास कार्यक्रमों के प्रावधानों के बावजूद महिलाओं की परिस्थिति शोचनीय ही है।

स्वामी विवेकानन्द के कथनानुसार कोई राष्ट्र तब तक अपना पूर्ण विकास नहीं कर सकता जब तक कि उसका प्रत्येक नागरिक राष्ट्र के विकास में भागीदार नहीं बनता।

इस प्रकार स्त्री एक अच्छे समाज और अच्छे राष्ट्र का स्रोत होती है। विद्या से ही व्यक्ति संकीर्ण मानसिकता और रूढ़िवादिता की जंजीरों को तोड़ सकता है। यदि स्त्री शिक्षित है तो पूरा परिवार शिक्षित होता है। शिक्षा ही हमें सामाजिक भेदभावों और ऊँच–नीच की भावनाओं से उबारने का काम करती है। इसलिये स्त्रियों का शिक्षित होना बहुत आवश्यक हो जाता है क्योंकि उसके विचार ही उसके बच्चे होते है अगर वह अपने बच्चों को इन रूढ़िगत विचारों से दूर रखे और यह बताये कि कोई छोटा या बड़ा नहीं होता। व्यक्ति के कार्य और विचार ही उसे छोटा या बड़ा बनाते हैं। यदि माता अपने बच्चों में जाति–भेद और धर्म–भेद रहित विचारों का बीजारोपण करे तो आगे चलकर वह एक ऐसा वृक्ष बनेगा जिसमें सामाजिक–समरसता से पूर्ण फल लगेंगे जो बिना किसी भेदभाव के छाया भी प्रदान करेगा।

इस प्रकार एक शिक्षित स्त्री एक शिक्षित देश को जन्म देती है। यदि हम इतिहास पर नजर डालें तो हमें ऐसी बहुत सी विदुषी स्त्रियों के नाम मिल जायेंगे जिन्होंने अपनी विद्यता का लोहा मनवाया था और इस

प्रकार इतिहास में अपना नाम अमर करवा लिया था। ऐसी स्त्रियों में अपाला, घोषा, गोपा, सावित्री, मैत्रेयी और गार्गी जैसी अन्य अनेक स्त्रियों के नाम मिलते हैं जिन्होंने विद्यार्जन कर स्त्रियों के अस्तित्व को गौरव प्रदान किया था। उनकी शक्ति थी उनकी विद्या, लेकिन बाद के कालों में उनकी यह शक्ति उनसे छीनी जाने लगी। उन्हें विद्या से रहित कर दिया गया और यही उनकी स्थिति की अवनति का कारण बना। देखा जाये तो आज भी वो स्थिति प्राप्त नहीं कर पाई है। हालांकि कुछ हद तक उसने अपने को उबारा है, लेकिन अभी भी पूर्णरूपेण उन्नति होना बाकी है। सामाजिक कुरीतियों का उसे शिकार बनाया गया। छोटी उम्र में विवाह प्रारम्भ हुये, उपनयन संस्कार से उसे वंचित किया जाने लगा, फलस्वरूप उसका व्यक्तित्व कुंठित हो गया है।

बाल–विवाह के कारण शिक्षा उससे छिन गई और तब यह केवल सभ्रान्त परिवारों की स्त्रियों तक ही सीमित हो गई या पुरूष की संकीर्ण मानसिकता, स्त्री को शिक्षा से वंचित होना पड़ा जिसके कारण वह पर्दा–प्रथा, सती प्रथा, नियोग–प्रथा आदि अनेक बुराईयों की बेड़ियां काटने में असक्षम हो गई क्योंकि उसका हथियार ''शिक्षा'' उससे छीना जा चुका था। शिक्षा जो कि सिर्फ सर्वांगीण विकास ही नहीं करती बल्कि हमें समाज में व्याप्त बुराईयों से लड़ने की शक्ति भी प्रदान करती है। वो हमें अपने अधिकारों के प्रति सचेत करती है।

साहित्य अवलोकन :–

अनेक समाजशास्त्रियों, जनसंख्याविदों तथा शिक्षाविदों ने स्त्रियों की सामाजिक स्थिति का अनुभवात्मक अध्ययन किया है तथा अपने विश्लेषण के द्वारा महिलाओं की सामाजिक, व्यवसायिक गतिशीलता तथा पुरूषों के समान शैक्षणिक व सामाजिक अधिकार, परिवार में निर्णय निर्धारक भूमिका तथा प्रदत्त परिस्थिति को नकार कर, अर्जित प्ररिस्थिति द्वारा अपनी क्षमता के नये आयामों को उद्घाटित करना, के सन्दर्भ में विभिन्न मत प्रस्तुत किये गये हैं। यहाँ शोध आलेख से सम्बन्धित विभिन्न समाजशास्त्रियों, जनसंख्याविदों तथा शिक्षाविदों के साहित्य का अवलोकन किया गया है जिसमें इनके अध्ययन के निष्कर्षों का संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

मीनाक्षी मुखर्जी (1988) का मत है कि पुरूषों से स्वतन्त्र स्त्रियों की पहचान की अभिव्यक्ति वैचारिक दृष्टि से सम्भव है परन्तु व्यवहारिक तौर पर नहीं। एक पुरूष की अपेक्षा एक स्त्री के लिये सामाजिक अनुपालन अधिक आवश्यक है। सामान्यतः एक महिला की पहचान स्वयं और अन्य लोगों के द्वारा पुरुषों के साथ एक पुत्री, एक पत्नी और एक माँ के रूप में की जाती है।

मीनाक्षी का मानना है कि परिवार ही स्त्रियों को गुलाम बनाने वाली संस्था नहीं है। समाज की प्रकृति ही ऐसी है कि जिसमें स्त्रियों के साथ अनादर रूप में व्यवहार किया जाता है।

माग्रेट कारमैक (1779) ने विश्वविद्यालय की 500 छात्राओं के अध्ययन के दौरान पाया कि लड़कियां कॉलेज जाना और लड़कों से मित्रता करना चाहती थीं लेकिन वे ये भी चाहती थीं कि उनका विवाह उनके माता–पिता तय करें। वे अपनी नव स्वतन्त्रता का भोग भी करना चाहती हैं लेकिन साथ ही साथ पुराने मूल्यों को भी बनाये रखना चाहती हैं।

गोविन्द केलकर (1981) ने अपने अध्ययन में पाया कि हरित क्रान्ति वाले क्षेत्र पंजाब में स्त्रियों को दिन–भर कामकाज के बाद पति की सेवा भी करनी पड़ती है। स्त्री द्वारा उलटकर जवाब देना, ठीक तरह से भेजन न परोसना या कभी–कभी पारिवारिक मामलों में बोलना उनका अपराध माना जाता है और इसके लिये उनकी पिटाई भी होती है।

कॉपर ने कानून की नजर में महिलाओं की स्थिति को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इस अध्ययन के आधार पर महिलाओं की संवैधानिक स्थिति, प्रभुता, अधिकार, सम्पन्नता, कानूनी शक्ति इत्यादि को समझा जा सकता है। वस्तुतः महिलाओं की परिस्थिति को उच्च बनाने

की दृष्टि से इनके पक्ष में कानून निर्मित किये गये हैं, किन्तु भारतवर्ष में पुरूष प्रधान समाज होने के कारण भारतीय महिलाओं का एक प्रमुख एवं विचारणीय भाग कानून के प्रावधान से अनभिज्ञ रह गया है फिर भी भारतीय समाज की उच्च वर्गीय महिलाओं ने इसका लाभ उठाकर अपनी सामाजिक परिस्थिति को उच्च किया है।

मिश्र (1981) ने अपने अध्ययन के द्वारा यह बताने का प्रयास किया है कि जब तक सामाजिक–सांस्कृतिक बाधायें समाप्त नहीं होगी तब तक भारतीय महिलाओं का सर्वांगीण विकास सम्भव नहीं है। महिलाओं के प्रति पुरूषों की दृष्टि में परिवर्तन आवश्यक है।

आज भी बहुत से ऐसे ग्रामीणजन हैं जो वासनात्मक निषेध के कारण अपनी बालिकाओं को घर के बाहर नहीं जाने देते और बाल्यावस्था में ही विवाह कर देते है। वस्तुतः आज भी महिलायें पुरुष की नजर में महिला और मात्र महिला है, इसके अतिरिक्त वे कुछ नहीं हैं और पुरुषों का वासनात्मक लक्ष्य बनी हुई हैं। इस दृष्टि में परिवर्तन अपरिहार्य है।

गोस्वामी तुलसीदास ने भी अपने रामचरित मानस के द्वारा इस तथ्य की पुष्टि की है। महिलाओं में अद्वितीय क्षमता पायी जाती है। इन्होंने भक्ति साहित्य, राजनीति, शिक्षा, विज्ञान, तकनीकी, चिकित्सा, सेना इत्यादि सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में जाकर अपनी अदभूत प्रतिभा का अनोखा परिचय दिया है। आज महिलाओं को पहचानने की आवश्यकता है। ये सब कुछ कर सकती है। एक ओर बहुत अच्छी व्यवस्था कर सकती है तो दूसरी ओर समाज में क्रान्ति भी ला सकती है। पुरुषों की सेवा करने में समक्ष है तो पुरूषों को झुकने और उनसे अपनी सेवा कराने की क्षमता भी रखती है।

भारतीय महिलाओं की भूमिका के विभिन्न स्वरूप :–

विवाह मूलक परिवार में स्त्री की भिन्न–भिन्न परिस्थितियों होती है उदाहरण के लिए बेटी, पत्नी, बहू, माँ इत्यादि। इन परिस्थितियों से सम्बन्धित भूमिकाओं का निर्वाह करना होता है एवं प्रत्येक भूमिका निर्वाह के समय उनसे समपर्ण एवं भेदभाव की भावना की अपेक्षा की जाती है। वहाँ भी उसे निम्न परिस्थिति प्राप्त होती है एवं उनका कोई पृथक व स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता। इस प्रकार स्त्रियों की परिस्थितियों में उतार–चढ़ाव पाया गया है, परन्तु यह परिस्थिति सम्बन्धी उतार–चढ़ाव अचानक परिलिक्षित नहीं हुआ अपितु यह एक क्रमिक प्रक्रिया का परिणाम है। समाज में जैसे–जैसे परिवर्तन व बदलाव आते गये वैसे–वैसे स्त्रियों की स्थिति में भी परिवर्तन होते गये।

जब व्यक्ति की भूमिकाएं अनेक हो जाती है तो उन भूमिकाओं में कभी–कभी संघर्ष की स्थिति आ जाती है व्यक्ति अपनी सभी भूमिकाओं का पूर्ण और यथोचित निर्वाह नहीं कर पाता जिन महिलाओं को घर के भीतर और बाहर कार्य करना पड़ता है वे न तो घर में और न ही घर के बाहर अपने दायित्वों का पूर्ण रूपेण पालन कर पाती है। ग्रामीण समाज की शिक्षित लड़कियों के लिए उचित वर नहीं मिल पाता, जो मिलता भी है उसकी मांग इतनी अधिक होती है कि लड़की के पिता उन मांगों को पूरा करने में असमर्थ होते है। वैवाहिक समस्या एक ज्वलंत समस्या है। आज की शिक्षित महिलायें जिसका शिकार है।

इससे बड़ी कोई विडम्बना नहीं हो सकती कि पुरुष समाज ने समाज की इस आधी दुनिया को अत्याचारों की क्रूर जंजीरों में जकड़ने में कोई कसर नहीं छोड़ी हैं उसको कुचलने मसलने और उसके उपभोग से भिन्न अस्तित्व को स्वीकारने के संदर्भ में पुरुषों का सदैव दोहरा मानदण्ड रहा हैं महिला देह उसकी एक मात्र पहचान बना दी गई हैं वह पुरूष की इच्छा, वासना और निरंकुशता के नियंत्रण का अवांछित दंश भोगने को विवश रहती हैं। महिलाएं चूंकि शारीरिक शक्ति और क्षमताओं में पुरुष से कमजोर होती है इसलिए पुरूष जगत ने उन्हें अपनी पाशविक शक्ति के बल से बलात्कार, अपहरण, पिटाई तथा अन्य

अत्यंत अमानुषिक अत्याचारों से दबा रखा हैं। प्रतिदिन के समाचार पत्र, पत्रिकाओं, रेडियो, टी०वी० तथा अन्य सूचना के माध्यमों से महिलाओं पर हो रहे अत्याचारों का खुलासा पढ़कर रोगटे खड़े हो जाते हैं। बलात्कार महिलाओं के लिए सबसे बड़ी गाली तो है ही, अत्याचार की राक्षसी लीला भी है, लज्जा और ग्लानि से सारे पुरूष समाज का सिर झुक जाता है जब समाचार पत्रों में यह लाईन पढ़ने को मिलती हैं– ''कोलकाता में एक पिता द्वारा अपनी नाबालिग पुत्री के साथ बलात्कार।'' दरअसल नारी की पुरानी व नई स्थिति में कोई ज्यादा फर्क नहीं आया हैं, वरना मुल्क की आजादी के इतने वर्षों बाद भी लाखों माँ–बहनें, वेश्यावृत्ति करने को मजबूर नहीं होती। सैकड़ों बहनें दहेज के नाम पर मारी ना जाती या आत्महत्या करने को मजबूर न की जाती।

नारी की स्थिति में कोई फर्क तभी आ सकता है जब नारी अपनी 'सोच बदलेगी। दरअसल गुलामी के बंधन तभी टूटते हैं, जब बंधनों में जकड़ा आदमी अपने आप को आजाद महसूस करता हैं। महात्मा गांधी ने कहा था ''कई बार ऐसी परिस्थिति बन जाती है जब जेल में रहकर आदमी ज्यादा आजाद होता है, बजाय बाहर रहकर अनुचित कानूनों के मानने के।'' आज यही स्थिति नारी पर लागू होती है।

भारतीय समाज में कामकाजी महिलाओं की वर्तमान स्थिति एवं समाज का बदलता स्वरूप :–

प्राचीन समय में महिलाओं को घर के बाहर काम करने के लिए नहीं जाने दिया जाता था, उनका मूल कार्य घर में रहकर घर के कामकाज करना था। महिलाएँ चूल्हों पर भोजन पकाती थी तथा सामान्य रूप से संयुक्त परिवार प्रथा का प्रचलन था। परिवार बड़ा होने के कारण प्रायः छोटे–बड़े सभी कार्य घर की महिलाओं को ही करने होते थे।

भारतीय सामाजिक संरचना पुरुष प्रधान है। पुरुष घर से बाहर काम करने जाते हैं एवं महिलाएं अपने घरेलू कार्य का संभालने में लगी रहती है। बच्चों का पालन–पोषण एवं परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति करना उनका मुख्य कार्य है। आर्थिक उपार्जन उनका कार्य क्षेत्र नहीं रहा है। यद्यपि इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि प्राचीन काल से महिलाएँ प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं एवं कृषि कार्य में संलग्न रही है। आधुनिक युग में महिलाएं कामकाजी होने के साथ–साथ सफल गृहणियाँ भी सिद्ध हो रही है, लेकिन कभी किसी ने ध्यान नहीं दिया होगा कि महिलाएँ किस प्रकार सभी कार्यों का समायोजन करती होगी। वर्तमान युग में कामकाजी महिलाएँ बदलते हुए वैश्विक दौर में समय के साथ बदलते परिवेश के साथ अपना सामंजस्य करने में सक्षम हो रही है। सरकारी या निजी कार्यस्थल व घर के काम में अपने प्रबन्धन की भूमिका बखुबी से निभाती है।

धीरे–धीरे शिक्षा का विकास होने लगा, नवीन तकनीकी प्रकाश से पुरुषों के समान प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएं भी आगे आने लगी। भारत में औसतन प्रत्येक घर की महिलाएं घर के बाहर या घर पर कुछ ना कुछ आय अर्जन करने में लगी है। साथ–साथ अपने निजी जीवन को भी गतिशील रखने के प्रयास करती है। कामकाजी महिलाएं अपने परिवार और अपने भविष्य को संवारने के लिए कार्य करती है। इतनी महगाई के युग में केवल घर के पुरूष की आय पर ही निर्भर रहना और उस पर खर्च का बोझ लादना अकेले बैल से खेत जुतवाने के समान है।

भारत में कुल 73 प्रतिशत साक्षरता, ग्रामीण क्षेत्र में 57.9, शहरी क्षेत्र में 79.1 प्रतिशत रही है। महिला शिक्षा के बढ़ते स्तर ने महिलाओं को कामकाजी होने की प्रेरणा दी है। फलतः उनकी प्रवृत्ति कामकाजी हो गयी है। आज वे विविध भूमिका का निर्वाह कर रही है, आज वे सभी क्षेत्रों में पुरूषों के समान पदों पर आसीन है। राजनीतिक सत्ता का क्षेत्र हो या आई.ए.एस. ऑफिसर की कुर्सी, अभिनय की अभिव्यक्ति हो या नृत्यांगना का नृत्य, साहित्य का क्षेत्र, ललित कला, आंगन, राग–रागिनीयों की सरगम हो या चित्रकारी की चितेरी,

चिकित्सक या कानूनी सलाहकार, प्रशासन का क्षेत्र हो या शिक्षिका प्रोफेसर का दायित्व, ज्ञान विज्ञान हो या कलात्मक प्ररतुति, महिलाओं के कामकाज का विस्तार सभी क्षेत्रों में हुआ है। कामकाजी महिलाएं अपनी योग्यता से न केवल धन अर्जित करती है, अपितु वे अर्जित धन से पारिवारिक आर्थिक संरचना में अपना योगदान देकर आर्थिक संबल प्रदान करती है। महिलाओं का आर्थिक उपार्जन आर्थिक क्षेत्र में उनकी आत्म निर्भरता को प्रदर्शित करता है।

कामकाजी पत्नी को दोहरी नहीं, तीहरी भूमिका निभानी पड़ती है। पत्नी, मां और कामकाजी नारी। परिवार और कार्यक्षेत्र का दायित्व सफलतापूर्वक निभाने की होड़ में उसमें तनाव पैदा हो जाता है और उसका प्रभाव उसकी कार्यक्षमता पर पड़ता है। वह न तो कार्यालय में अपनी क्षमता का उपयोग कर पाती है और घर में भी वह सही ढंग से अपने उत्तरदायित्व को नहीं निभा पाती है। अतः एक कामकाजी नारी को सफलतापूर्वक कार्य करने के लिए पारिवारिक वातावरण का सहयोग आवश्यक होता है तभी वह अपनी कार्यक्षमता का सही उपयोग कर सकेगी। तभी वह आगे बढ सकेगी और उन्नति कर सकेगी। वह समाज में स्वयं का और परिवार का स्थान बना सकेंगी। इससे उसके परिवार की भी प्रतिष्ठा बढेगी, सम्मान बढ़ेगा।

समाज में आज कामकाजी नारी का सम्मानीय स्थान है। वह घर से बाहर जाकर सक्रिय हो रही है। आज समाज में ऐसा कोई कार्य नहीं है जो नारी की सीमा एवं योग्यता के बाहर हो। साथ ही नारी ने अपनी घरेलू भूमिका को भी निभाया है। आज भी घर की मुख्य जिम्मेदारी उसकी है। कामकाजी नारी के लिए घर एवं कार्यालय की दोहरी जिम्मेदारी होती है। दोनों ही भूमिकाएँ अपने–अपने स्थान पर महत्वपूर्ण है। किसी को भी नजर अंदाज किये बिना सुचारू रूप से निभाने में नारी के सामाने अनेक समस्याएँ आती है।

सामान्यतः परिवारजन अक्सर कामकाजी नारी के सम्बन्ध में गैर – कामकाजी नारी सोचती है कि कामकाजी नारी की स्थिति अच्छी है। उसे अतिरिक्त अधिकार और स्वतंत्रता प्राप्त है। किन्तु व्यवहार में कामकाजी नारी पारिवारिक दायित्वों से मुक्त नहीं है। कार्यक्षेत्र से घर आते ही वह एक घरेलू नारी बन जाती है।सभी आवश्यक घरेलू कार्य उसे ही करने पड़ते है। मैं रोजाना सुबह एक अध्यापिका को स्कूल जाते हुए देखती हूँ। उनके पति कार में उन्हें छोडने जाते है। तब उन की अध्यापिका के चहरे पर हँसी को देखकर सोचती हूँ कि क्या पारिवारिक वातावरण के सहयोगपूर्ण हाने पर उसकी कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

साथ ही अन्य महिला जो कार्यालय जाती है बहुत थकी–थकी सी लगती है। ऐसा लगता है कि कार्यालय जाना उसकी मजबूरी है। वह जिम्मेदारियों के बोझ तले दबी हुई है। उसके पारिवारिक वातावरण सहयोग पूर्ण नहीं होने से उसकी कार्यक्षमता में कमी हो रही है।

एक कामकाजी महिला को उसका पारिवारिक वातावरण सहयोग करता है तो अधिक कार्यकुशलता से कार्य करती है। जब वह अपने कार्यालय से थकी हुई लौटती है तब उसके परिवार के लोग उसकी परिस्थिति को देखते हुए उसका सहयोग करते है तो वह भी अपने परिवारजनों की भावनाओं का आदर करती है तथा उनका सम्मान करती है। वह उनके साथ समय व्यतीत करती है तथा अपने परिवार में अच्छे से समायोजित हो पाती है।

निष्कर्ष :–

अतः महिलाओं की अभाव, अत्याचार, घुटन, कुरीतियों तथा पशुओं से भी बदतर जीवन स्थितियों को आजादी प्राप्ति के बाद बदलने का सिलसिला प्रारम्भ अवश्य हुआ। पहले दशक में विस्तृत सर्वेक्षण कर विकास की नीतियों के चरण निर्धारित किए गए। महिला दशक की वैचारिकता ने उनके विकास के मुद्दों की नयी दिशा प्रदान की। इतिहास में पहली बार महिलाओं के विकास कार्यक्रमों में भागीदारी की पहचान बनना प्रारम्भ हुई। शिक्षा तथा कल्याण कार्यक्रमो का सुप्रभात दिखाई दिया

तथा अधिकारों ओर समानता के प्रति जागरूकता के विकास की झलक मिलने लगी।

कामकाजी महिलाओं को चूकि घर बाहर दोनों जगह भूमिका का निर्वाह करना पड़ता है फलस्वरूप उन पर कार्य का बोझ तो बढ़ता ही है साथ ही कार्य स्थल पर एवं परिवार दोनों ही स्थान पर उनका कार्य प्रभावित भी होता है। दोहरी भूमिका इनके थकान का कारण भी है। अधिकांश महिलाओं के पास परिवार में मदद के लिए कोई सदस्य ना होने के कारण उन्हें घरेलू नौकरानियों की आवश्यकता होती है। कार्यस्थल में यौन शोषण, लिंग विभेदीकरण एवं असुरक्षा जैसी समस्याओं से ये महिलाएं जूझती हैं। अधिकांश महिलाओं के नौकरी करने का कारण आर्थिक विवशता है किन्तु अनेक महिलाएं आर्थिक स्वतन्त्रता एवं अपनी विशिष्ट पहचान बनाने के लिए भी नौकरी करती हैं।

संदर्भ–सचीः–

1. मीनाक्षी मुखजी : रियलिटी एण्ड रियलिज्म, इडियन वुमन ऐज प्रोटेगनिस्ट्स इन फोर नाइटींथ सेंचुरी नॉवेल्स, इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, 1884
2. राम आहूजा : भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली 2002
3. गोविन्द केलकर : इम्पैक्ट आफ ग्रीन रिवोल्यूशन आन वीमेन्स वर्क पार्टीसिपेशन एण्ड सैक्स, सेन्टर फॉर पोलिसी रिसर्च, नई दिल्ली. 1881
4. मैत्रेयी कृष्णराज : रिपोर्ट आन वर्किंग वीमेन साइंटिस्ट्स इन बाम्चे एस.एन.डी.टी.. वीमेन यूनिवर्सिटी रिसर्च यूनिट आन वीमेन स्टडीज, बम्बई, 1971
5. दीपा माथुर : वूमेन, फैमिली एंड वर्क, रावत पब्लिकेशन जयपुर, 1992
6. सुधीर श्रीवास्तव : वूमेन इमपावरमेंट, टाटा मैग्रोहिल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1985
7. मीनाक्षी व्यास : मिडिल एंड लोअर क्लास वर्किंग वूमेन, सौम्या पब्लिकेशन, मुंबई, 2002
8. सोरन सिंह : सिडियूल कास्ट इन इंडिया एंड डाईमेन्शन ऑफ सोशल चेंज, ज्ञान पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1997
9. नृपेन्द्र कुमार : पार्टीसीपेशम ऑफ वूमेन इनसोसाटी, एशिया पब्लिकेशन हाउस, मुंबई, 1982
10. प्रतिमा कपूर : द स्टडी ऑफ एडजस्टमेंट ऑफ वकिंग वूमेन इन इंडिया, आगरा पब्लिकेशन, 1986
11. ए0 एस0 अलटेकर : द पोजिशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, मोतिलाल बनारसी दास, वाराणसी